इकाई 10 राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 मध्यम वर्ग की चेतना का उदय

10.3 राष्ट्रवाद की प्रारंभिक साहित्यिक और संगठनात्मक अभिव्यक्ति

10.4 भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना

10.5 कांग्रेस की संरचना और भागीदारी

10.6 कांग्रेस की उत्पत्ति से संबंधित विवाद

10.6.1 सरकारी षड़यंत्र सिद्धांत

10.6.2 भारतीय विशिष्ट वर्ग की प्रतिद्वन्द्विता और महत्वकांक्षाएँ

10.6.3 अखिल भारतीय संस्था की आवश्यकता

10.7 प्रारंभिक कांग्रेस की कार्य प्रणाली

10.8 नरम दल (उदारवादी) : माँगें और कार्यक्रम

10.9 गरम दल (उग्रदल) का सैद्धांतिक आधार

10.10 गरम दल की कार्रवाई

10.11 विभाजन (बंगाल), बहिष्कार, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा

10.12 क्रांतिकारी राष्ट्रवाद का उदय

10.13 सारांश

10.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे :

- राष्ट्रीय चेतना के विकास में सहायक मुख्य कारकों की सूची बनाने में,
- भारतीय मध्यम वर्ग की औपनिवेशिक शासन की चुनौती पर मध्यम वर्ग की प्रतिक्रिया को समझने में,
- राष्ट्रीय चेतना ने कैसे संगठित रूप ले लिया, इसका आकलन करने में,
- कांग्रेस के संगठन में शिक्षित भारतीयों द्वारा निभाई गई भूमिका को विशेष रूप से समझने में,
- भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की उत्पत्ति और प्रारंभिक कांग्रेस के चरित्र के इर्द-गिर्द विवादों का वर्णन करने में, और
- बंगाल विभाजन के बाद स्वदेशी आंदोलन के उदय और क्रांतिकारी राष्ट्रवाद के उदय के बारे में जानने में।

10.1 प्रस्तावना

उन्नीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय चेतना का उद्भव वस्तुतः अंग्रेजी शासन का परिणाम था। अंग्रेजी शासन ने जो परिवर्तन आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र में किए थे उसके परिणामस्वरूप, भारतीय जनता के सभी वर्गों का ही शोषण हुआ था जिससे जनता के

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 113 24-03-2021 11:47:21

बीच अंसतोष की भावना ने एक व्यापक रूप लिया। दूसरी तरफ अंग्रेजों ने डाक और तार व्यवस्था, रेल, छापेखाने, एकरूप प्रशासन आदि का विकास किया। यद्यपि इनका विकास एक सुचारू प्रशासन चलाने की दृष्टि से किया गया था तथापि इन सभी ने राष्ट्रीय चेतना के उद्‌भव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहाँ हम राष्ट्रीय आंदोलन की प्रारंभिक चरण में संगठनात्मक रूप और रुझानों की चर्चा करेंगे।

10.2 मध्यम वर्ग की चेतना का उदय

उन्नीसवीं शताब्दी में जन आधारित लोकप्रिय आंदोलनों और विद्रोहों के अतिरिक्त शिक्षित भारतीय मध्यम वर्ग में एक नवीन चेतना का विकास हो रहा था। मध्यम वर्ग में जागृत इस चेतना ने ही लोकप्रिय असंतोष को एक निश्चित दिशा प्रदान की और राष्ट्रीय चेतना के विकास में एक महत्वपूर्ण कारक बना। शिक्षित मध्यम वर्ग ने भारतीय समाज पर एक आलोचनात्मक दृष्टि डाली और इस जागरूक वर्ग ने उसमें सुधार करने के लिए अत्यधिक प्रयास किया। यद्यपि ये सुधार आंदोलन मुख्यतः समाज के मध्यम वर्गों तक सीमित थे परन्तु इस संबंध में भारतीय जनता के मध्य राष्ट्रीय स्तर पर एक सामाजिक चेतना जागृत करने में उन्होंने अत्यधिक ध्यान दिया और जनता में एक समान संस्कृति से जुड़े होने की भावना को प्रबल किया। सामाजिक चेतना के साथ-साथ राजनीतिक चेतना का भी विकास हो रहा था जैसे कि पहले जिक्र किया जा चुका है, भारतीय शिक्षित वर्ग भी, जिसमें कि व्यापारी, वकील, अध्यापक, पत्रकार, डॉक्टर आदि थे, अंग्रेजी शासन के अंतर्गत कष्टों का सामना कर रहा था। किसानों और कामगारों की तुलना में यह वर्ग साम्राज्यवाद के उद्‌देश्यों और औपनिवेशिक शासन के स्वरूप को अधिक स्पष्टता से समझकर उनका विश्लेषण कर सकता था। प्रारंभ में इस वर्ग की यह धारणा थी कि संचार साधनों का विकास और रेल लाइन आदि भारतीयों के लाभदायक साबित होंगे। इस धारणा के कारण ही उन्होंने अंग्रेजी नीतियों का समर्थन किया था। लेकिन धीरे-धीरे उन्हें यह स्पष्ट होने लगा कि अंग्रेजों ने जो प्रशासनिक तरीके अपनाए थे, वे वास्तव में अंग्रेजी शासन को सुदृढ़ बनाने के लिए अपनाए थे और उनकी आर्थिक नीतियाँ भी केवल अंग्रेजी व्यापारियों और पूँजीपतियों के हित के लिए ही थी, जैसे ही भारतीय मध्यम वर्ग को अंग्रेजी शासन के इस तथ्य की अनुभूति हुई उसने औपनिवेशिक शासन का विरोध प्रारंभ कर दिया, परन्तु किसानों, कामगारों और जन-जातियों ने जो विद्रोह का रास्ता अपनाया था उसे मध्यम वर्ग ने नहीं अपनाया। मध्यम वर्ग ने दो नवीन तरीके अपनाएः

1) इस वर्ग ने अंग्रेजी नीतियों की आलोचना करते हुए किताबें लिखीं, लेख लिखे और समाचार-पत्रों के माध्यम से जनजागरण का प्रयास किया।

2) इस वर्ग द्वारा अपनाया गया दूसरा तरीका विभिन्न संगठनों और समितियों की स्थापना थी, जिनके द्वारा संयुक्त कार्यक्रम बनाया जा सके।

10.3 राष्ट्रवाद की प्रारंभिक साहित्यिक और संगठनात्मक अभिव्यक्ति

आइए हम पहले साहित्यिक क्षेत्र में किए गए मध्यम वर्ग के कार्यों की विवेचना करें। यह चर्चा हम पहले ही कर चुके हैं कि किस प्रकार छापाखाना के आने से विचारों के आदान-प्रदान को सहयोग मिला था। राजा राममोहन राय ने इस क्षेत्र में भी अग्रदूत का कार्य किया। उन्होंने बंगला भाषा में एक पत्रिका **संबाद कौमुदी** प्रकाशित करनी प्रारंभ की जिसमें कि विभिन्न विषयों पर लेख लिखे जाते थे। दीन बंधु मित्र ने **बंगला भाषा में नील दर्पण** नामक नाटक लिखा। जिसमें कि नील की खेती करने वाले किसानों के कष्टों का जिक्र था। बंकिम चंद्र ने **आनंद मठ** लिखा, जो राष्ट्रीय भावना से प्रेरित था। इसी प्रकार उर्दू की शायरी और लेखन में भी भारतीय जनता की गिरती हुई दशा का जिक्र हुआ और इस बात को भी उठाया गया कि किस प्रकार से परंपरागत भारतीय नगरों का पतन हो रहा था। मराठी, हिंदी और तमिल में भी इन्हीं विषयों पर लेख प्रकाशित हुए। अंग्रेजी के अतिरिक्त विभिन्न भाषाओं में भी समाचारटपत्रों का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। उस समय के कुछ प्रमुख समाचार-पत्र जिन्होंने कि राष्ट्रीय चेतना में योगदान दिया, निम्नलिखित थेः

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 114 24-03-2021 11:47:21

- बंगाल में हिन्दू पैट्रीएट, **अमृत बाजार पत्रिका, बंगाली** और **संजीवनी**
- बंबई में **मराठा, केसरी** और **नेटिव ओपीनियन**
- मद्रास में **हिंदू, आंध्र पत्रिका** और **केरल पत्रिका**
- संयुक्त प्रांत में **हिन्दुस्तान** और **आजाद**
- पंजाब में **ट्रिब्यून** और **अखबार-ऐ-आम** आदि

1877 तक देशी भाषाओं में प्रकाशित होने वाले समाचार-पत्रों की संख्या 169 हो गई थी इसके साथ-साथ कई महान साहित्यकार भी उभरकर सामने आए जिनकी कलम ने राष्ट्रीय चेतना को एक नवीन रूप दिया। इन साहित्यकारों में बंकिम चन्द्र चटर्जी, रविन्द्र नाथ ठाकुर, सुब्रह्मण्यम भारती, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, अलताफ हुसैन हॉली और विष्णु शास्त्री चिपलुंकर आदि प्रमुख थे।

मध्यम वर्ग द्वारा अपनाया गया दूसरा रास्ता विभिन्न संगठनों और समितियों की स्थापना थी, इनमें से कुछ प्रमुख प्रारंभिक संगठन थेः

बंगाल में : लैंड होल्डर सोसायटी (1838)
बंगाल इंडिया सोसायटी (1843)
ब्रिटिश इंडिया एसोसिएशन (1851)

महाराष्ट्र में : बौम्बे ऐसोसिएशन (1852)
डेकेन ऐसोसिएशन (1852) आदि

मद्रास में : मद्रास नेटिव ऐसोसिएशन

इन संगठनों का प्रमुख उद्देश्य ऐसी अंग्रेजी नीतियों का संयुक्त रूप से विरोध करना था जो कि उनके स्वार्थों पर आघात करती थी परन्तु विरोध का तरीका पूर्णतः सवैंधानिक था, जैसे कि कचहरी में अर्जी देना, सरकार को अर्जी देना या अंग्रेजी संसद से अपील करना। वे चाहते थे कि 1853 के कंपनी चार्टर के अतंर्गत व्यापक सुधार लागू किया जाए परन्तु यह चार्टर उनकी माँगों को संतुष्ट करने में असफल रहा।

1858 में भारतीय प्रशासन का उत्तरदायित्व अंग्रेजी राज ने सीधे अपने हाथ में ले लिया जिससे भारत के मध्यम वर्ग में नयी आशा जागृत हुई। उन्होंने यह सोचा कि अंग्रेज भारत का आर्थिक शोषण बन्द करके भारतीयों के कल्याण हेतु कार्य करेंगे परन्तु शीघ्र ही उन्हें यह अनुभव हुआ कि भारतीयों का शोषण तो जब भी बरकरार है। अतः मध्यम वर्ग की राजनीतिक गतिविधि तीव्र हो उठी और नए संगठनों की स्थापना की गई। भारतीयों ने इंगलैंड में लंदन इंडिया एसोसिएशन की स्थापना की और 1866 में उसे ईस्ट इंडिया एसोसिएशन में मिला दिया गया। 1870 में महाराष्ट्र में पूना सार्वजनिक सभा का गठन किया गया, बंगाल में इंडियन एसोसिएशन (1876) और इंडियन नेशनल कांफ्रेस (1883) का गठन भी किया गया और मद्रास महाजन सभा का गठन किया गया।

यदि हम मध्यम वर्ग द्वारा निर्मित प्रारंभिक संगठनों से इन संगठनों की तुलना करें तो यह संगठन निसंदेह राजनीतिक उद्देश्यों से प्रेरित थे। इनका मुख्य उद्देश्य अंग्रेजी नीतियों के विरुद्ध प्रस्तावों और अपीलों के द्वारा विरोध करना था। जन-जागृति उत्पन्न करने के लिए इन्होंने सार्वजनिक सभाओं का रास्ता अपनाया। इन सभाओं में राष्ट्रीय मुद्दों पर भी बहस होती थी और विचारों का आदान-प्रदान किया जाता था। वास्तव में इन संगठनों ने ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना (1885) की भूमिका तैयार की थी।

इसी समय अंग्रेजी सरकार ने कुछ दमनकारी कानून भी पारित किए, जैसे कि वर्नाकुलर प्रेस एक्ट और भारतीय प्रशासनिक सेवाओं के लिए आयु का कम किया जाना। इस प्रकार के कानून वाइसराय लार्ड लिटन के काल में (1876-80) बनाए गए थे। भारतीयों पर इस प्रकार के दमनकारी कानूनों की तीव्र प्रक्रिया हुई थी।

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 115 24-03-2021 11:47:21

10.4 भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली बैठक के आयोजन का श्रेय ए. ओ. ह्यूम को जाता है। वे एक सेवानिवृत्त सरकारी अधिकारी थे, जिन्होंने सेवानिवृत्ति के बाद भारत में ही रहने का फैसला किया था। उनका लार्ड रिपन से बहुत ही अच्छा संबंध था और वह उनके इन विचारों से सहमत थे कि शिक्षित भारतीयों के उदय को राजनीतिक सच के रूप के स्वीकार करना चाहिए और समयानुसार ऐसा कदम उठाना चाहिए जिससे कि इस वर्ग की माँगों के लिए एक न्यायसंगत निकास की व्यवस्था हो और इस बात का भी प्रयास होना चाहिए कि उनकी महत्वाकांक्षाएँ पूरी हो सकें। उन्होंने कठिन परिश्रम करके अपने सारे संपर्कों को संघटित किया। दिसंबर 1884 के शुरू में वे रिपन को विदा करने बंबई पहुँचे। वे वहाँ करीब तीन महीने ठहरे और इस अवधि में उन्होंने प्रेसीडेंसी के प्रभावशाली नेताओं से शिक्षित भारतीयों के द्वारा उठाए जाने वाले राजनीतिक कार्यक्रमों के बारे में विचार-विमर्श किया। मार्च 1885 में यह तय किया गया कि इंडियन नेशनल यूनियन (शुरू में यही नाम अपनाया गया) का एक सम्मेलन क्रिसमस सप्ताह के दौरान पूना में आयोजित किया जाएगा। शुरू में ह्यूम और उनके सहयोगियों ने कलकत्ता में सम्मेलन बुलाने पर विचार किया। लेकिन बाद में उन लोगों ने पूना में ही आयोजन करने का निश्चय किया क्योंकि यह जगह देश के केन्द्र में थी और पूना सार्वजनिक सभा की कार्यपालिका समिति ने सम्मेलन की सारी व्यवस्था और आवश्यक कोष के इंतजाम करने की जिम्मेदारी ले ली थी।

हालांकि दुर्भाग्य ने पूना को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पहले अधिवेशन के आतिथ्य के अवसर से वंचित कर दिया। पूना में हैजा फैल जाने से स्थान को बंबई ले जाया गया। पहली सभा का आयोजन सोमवार, 28 दिसंबर 1885 को गोकलदास तेजपाल संस्कृत महाविद्यालय, बंबई में किया गया। इसमें करीब 100 लोगों ने भाग लिया जिसमें से 72 लोगों को सदस्यों की मान्यता दी गयी। कांग्रेस अध्यक्ष बनने का पहला गौरव बंगाल के डब्लू. सी. बनर्जी को मिला।

पहले कांग्रेस अध्यक्ष का अध्यक्षीय भाषण कांग्रेस के चरित्र, उद्देश्यों और कार्यक्षेत्र की ओर स्पष्टतः केंद्रित था। अध्यक्षीय भाषण ने कांग्रेस के प्रति पैदा होने वाली गलत धारणाओं को भी दूर करने की कोशिश की।

अध्यक्ष ने कांग्रेस के उद्देश्यों को साफतौर पर परिभाषित किया। उन्होंने उद्देश्यों का निम्नलिखित ढंग से उल्लेख कियाः

- देश के लोगों के बीच मित्रता तथा आपसी मेल-मिलाप को बढ़ावा देना।
- नस्ल, धर्ममत और प्रांतों के आधार पर पैदा हुए सभी विद्वेषों को दूर करना।
- राष्ट्रीय एकता की भावनाओं को संघटित करना।
- शिक्षित वर्गों द्वारा तत्कालिक मुद्दों पर व्यक्त मतों को दर्ज करना; और
- जनहित में उठाए जाने वाले कदमों का निर्धारण करना।

10.5 कांग्रेस की संरचना और भागीदारी

अक्सर इस बात का जिक्र किया जाता है कि कांग्रेस में वकीलों का बोलबाला था। उदाहरण के लिए, इतिहासकार अनिल सील का मानना है कि कांग्रेस के पहले अधिवेशन में आधे से ज्यादा (72 में 39) लोग वकील थे और आने वाले दशकों में भी एक तिहाई से ज्यादा प्रतिनिधि वकालत के पेशे से ही थे। पुराने रईस वर्ग के लोग जैसे– राजाओं, महाराजाओं, बड़े जमीदारों और धनी व्यापारियों की अनुपस्थिति सुस्पष्ट थी। कृषक और मजदूर भी उसकी ओर आकर्षित नहीं हुए। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि वकीलों का प्रभुत्व था। लेकिन यह लगभग सभी राजनैतिक संगठनों और विधायिकाओं के बारे में कहा जा सकता है। भारत में शिक्षित भारतीयों के सामने भविष्य निर्माण के बहुत कम अवसर उपलब्ध होने के कारण ज्यादातर लोगों ने कानूनी पेशे को ही अपना लिया।

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 116 24-03-2021 11:47:21

पुराने कुलीन वर्ग कांग्रेस की सभा में भाग नहीं लेते थे क्योंकि उनमें नए उदार और राष्ट्रीय विचारों के कारण असुरक्षा की भावना पैदा हो गई थी। हालांकि भारत के गरीबों की चर्चा काफी समय से कई नेताओं खासकर दादाभाई नौरोजी द्वारा की गयी थी परंतु आम जनता को आंदोलन के इस दौर में शामिल करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। जब कांग्रेस ने लोगों के हालात पर चर्चा शुरू की तब यह निश्चय किया गया कि पहला कदम प्रतिनिधि संस्थाओं के अधिकार के तरफ उठाना चाहिए। कांग्रेस द्वारा अपनाए तरीकों जैसे निवेदन-पत्र देना, अपील करना तथा लेख चर्चा को देखा जाए तो ऐसा स्वाभाविक ही था।

10.6 कांग्रेस की उत्पत्ति से संबंधित विवाद

चूंकि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत के इतिहास में अहम भूमिका निभायी है इसलिए यह स्वाभाविक था कि तत्कालीन और बाद के इतिहासकार इसकी स्थापना के कारण पर अपने-अपने विचार व्यक्त करें। सच तो यह है कि कांग्रेस की स्थापना के समय से ही इस प्रश्न पर विचार किया जा रहा है। कई विद्वानों ने इस बात का पता लगाने की कोशिश की है कि यह किसी एक व्यक्ति अथवा कई लोगों अथवा कुछ विशेष परिस्थितियों का प्रतिफल था जिसे इस घटना के पीछे प्रमुख तत्कालिक कारक माना जा सकता है। लेकिन सारे प्राप्त प्रमाण परस्पर विरोधी हैं। कांग्रेस की शुरुआत के 100 वर्ष बाद भी इतिहासकारों के बीच इस मुद्दे पर चर्चा जारी है। हम देखेंगे कि किस प्रकार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की व्याख्या निम्नलिखित वैकल्पिक सिद्धांतों द्वारा की जा सकती है।

10.6.1 सरकारी षड्यंत्र सिद्धांत

अगर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना किसी भारतीय द्वारा की गयी होती तो इसे एक स्वाभाविक तथा तार्किक रूप में स्वीकार कर लिया गया होता। परंतु, सच तो यह है कि अखिल भारतीय राजनैतिक संगठन की योजना को मूर्त और सुनिश्चित आकार एक अंग्रेज ए. ओ. ह्यूम नाम के व्यक्ति ने दिया जिसने कई विवादों को जन्म दिया है। ऐसा क्यों हुआ कि कांग्रेस की शुरुआत एक अंग्रेज द्वारा हुई? इसके अलावा, ह्यूम मात्र एक अंग्रेज ही नहीं बल्कि भारतीय सिविल सेवा में एक प्रशासनिक अधिकारी भी था। यह कहा जाता है कि नौकरी के उपरांत उसे कई ऐसे महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में पता चला जिनसे यह प्रमाणित होता था कि आम जनता के दुःखों और बुद्धिजीवी वर्ग के अलगाव ने काफी हद तक आक्रोश एकत्रित कर दिया था जो कि ब्रिटिश शासन के लिए खतरा पैदा कर सकता था। 1857 के महान् विद्रोह की यादें भी ताजा थीं। इसके अलावा, ह्यूम ने खुद ही कहा था कि उसका उद्देश्य भारतीय आक्रोश को रोकने के लिए एक सुरक्षा कपाट (सेफ्टी वाल्व) का प्रबंध करना था जिससे अंग्रेजों के विरुद्ध किसी बड़े विद्रोह को रोका जा सके। बनर्जी के इस वक्तव्य ने कि ह्यूम डफरिन की सीधी सलाह से काम कर रहे थे, इस आरोप को और भी मजबूती प्रदान की। इन दो तथ्यों को एक साथ अध्ययन करने से यह तथ्य पैदा हुआ कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म एक सुनियोजित ब्रिटिश षड्यंत्र से हुआ, जिसका उद्देश्य था कि शिक्षित भारतीयों के बीच पैदा हुए अंसतोष को शांतिपूर्ण और संवैधानिक तरीके से निकास मिल सकें और इस तरह राज के खतरे को टाला जा सके।

लेकिन इतिहासकार विश्वास करते हैं कि सरकारी निर्णयों में ह्यूम के प्रभाव को काफी बढ़ा-चढ़ाकर रखा गया है। गवर्नर जनरल लार्ड डफरिन को लिखे गुप्त पत्रों से जो अब उपलब्ध हैं यह प्रकट होता है कि ब्रिटिश पदाधिकारियों के द्वारा ह्यूम के विचारों को बहुत गंभीरता से नहीं लिया जाता था। इसके अतिरिक्त ह्यूम का उद्देश्य शिक्षित भारतीयों के असंतोष के निकाय के लिए ''सुरक्षा कपाट'' (सेफ्टी वाल्व) बनाने मात्र से कहीं अधिक तथा वास्तविक और निष्कपट था। उन्हें भारतीयों के प्रति एक मानवीय सहानुभूति भी थी और वह कई वर्षों तक कांग्रेस को एक मजबूत और सक्रिय संगठन बनाने के अथक प्रयास में लगे रहे। 1885 से 1906 तक वह कांग्रेस के महासचिव रहे और इसकी गतिविधियों के दिशा-निर्देशन, निश्चित आकार, सामंजस्यता तथा अभिलेखन में योगदान देते रहे। ह्यूम किसी भी मायने में सामाजिक और राजनीतिक वातावरण में परिवर्तन लाने के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराए जा सकते थे जो कि राष्ट्रीय संगठन की नींव और टिके रहने को

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 117 24-03-2021 11:47:21

वास्तविक रूप में यथार्थ बना सके। कांग्रेस के गठन को केवल एक व्यक्ति की पहल नहीं कहा जा सकता है। अन्य कारक भी थे, जैसा कि पहले बताया जा चुका है। इस संदर्भ में एक प्रश्न उठता है कि शिक्षित भारतीयों ने ह्यूम का नेतृत्व क्यों स्वीकार किया। एक कारण यह भी हो सकता है कि अंग्रेज होने के नाते वे क्षेत्रीय पक्षपात से स्वतंत्र थे। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि ज्यादा महत्वपूर्ण नेता सावधानीपूर्वक आगे बढ़ना चाहते थे ताकि उन्हें आधिकारिक रोष का सामना न करना पड़े। एक भूतपूर्व ब्रिटिश सिविल अधिकारी के कारण इस प्रयास से आधिकारिक क्षेत्रों में विद्वेष पैदा होने की कम संभावना थी। भारतीय नेता अच्छी तरह जानते थे कि तत्कालीन परिस्थितियों में क्या संभव था। ऐसी स्थिति में वे अपने विचारों को शासकों के दिमाग में बिना कोई संदेह पैदा किए संघटित और व्यक्त करना चाहते थे।

10.6.2 भारतीय विशिष्ट वर्ग की प्रतिद्वन्द्विता और महत्वाकांक्षाएँ

कई इतिहासकारों खासकर कैम्ब्रिज के विद्वानों ने कहा है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कुछ मायनों में राष्ट्रीय नहीं थी बल्कि यह स्वार्थी व्यक्तियों द्वारा चलाया गया आंदोलन था और यह उनके आर्थिक हितों और संकीर्ण विवादों की पूर्ति के लिए साधन के रूप में कार्य करता था। (इन विचारों को व्यक्त करने वाले सबसे ज्यादा, प्रभावशाली इतिहासकार अनिल सील हैं) लेकिन इस विचार को भारत में चुनौती दी गई है। यह बात सच है कि अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए हर कोई शक्ति पाना चाहता है। लेकिन कई अन्य व्यापक कारणों को नकारा नहीं जा सकता। इस तरह की विवेचना, रंग-भेद से ठेस लगी भावनाओं, देशवासियों की उपलब्धियों पर गौरवन्वित होने की भावना और इस बात का बोध होना कि उनके देशवासियों के हितों की पूर्ति भारत और ब्रिटेन के संबंधों के पुनर्गठन से बेहतर ढंग से हो सकेगी की उपेक्षा करती है। एक विदेशी शासन के तहत आकांक्षाओं और कुंठाओं की सामूहिक पहचान ने इन बंधनों को मजबूत किया था। विदेशी शासन ने लोगों की समान आकांक्षाओं और कष्टों को और बढ़ा दिया था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक और कई अन्य संगठन राष्ट्रवादी दृष्टि के आदर्शवाद से प्रेरित थे, जिसके कारण भारतीय राष्ट्र के हित में स्वयं, परिवार, जाति तथा समुदाय के हितों का अधीनीकरण कर दिया गया।

10.6.3 अखिल भारतीय संस्था की आवश्यकता

व्यापक संदर्भ में देखने पर प्रतीत होता है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना विदेशी शासन की लंबी अवधि के परिणामस्वरूप पैदा हुई और विद्यमान राजनैतिक और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों की ही प्रतिक्रिया थी। जैसा कि हमने देखा है कि 1880 दशक के दौरान एक राष्ट्रीय संगठन बनाने का विचार काफी हद तक रंग-रूप ले चुका था। दरअसल 1885 के अंतिम दस दिनों में करीब पाँच सम्मेलनों का आयोजन देश के विभिन्न भागों में किया गया। इसे ऐसे वक्त किया गया ताकि सभा के सदस्य पूना में होने वाली कांग्रेस में सम्मिलित हो सकें। इंडियन एसोसिएशन द्वारा द्वितीय भारतीय राष्ट्रीय सम्मेलन कलकत्ता में आयोजित किया गया। 1885 के दिसंबर के शुरू में जब पूना में सम्मेलन बुलाने की योजना की घोषणा की गयी तो सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को अपना सम्मेलन स्थागित करने की राय दी गयी। लेकिन उन्होंने इस स्थिति में ऐसा करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। 1886 में इसका विलय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में हो गया। इसी अवधि में यूरेशियनों द्वारा जबलपुर में तथा प्रयाग सेन्ट्रल हिन्दू समाज द्वारा इलाहाबाद में दो भिन्न सम्मेलन आयोजित किए गए। राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षित वर्ग के आविर्भाव, उनके द्वारा व्यक्त विचारों और संगठनात्मक विकासों के द्वारा राष्ट्रीय संस्था का निर्माण लगभग अवश्यम्भावी हो चुका था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस शिक्षित वर्ग के बीच राजनैतिक उद्देश्यों के लिए एक साथ काम करने की आवश्यकता की जागरुकता की परिणति का प्रतिनिधित्व करती थी। प्रारंभिक वर्षों (1885-1905) में भारतीय राष्ट्र कांग्रेस का विकास हुआ। इस अवधि के दौरान कांग्रेस पर नरम दल का आधिपत्य था। धीरे-धीरे इसमें एक समूह उभरा जो नरम दल की नीतियों से सहमत नहीं थे और आक्रामक कार्यवाही में यकीन करते थे। उनके आक्रामक रूख के कारण उन्हें गरम पंथी कहा गया। दोनों समूह ब्रिटिश राज का विरोध करने में भिन्न राजनैतिक पद्धतियों में विश्वास करते थे। उनके अंतरों से 1907 में कांग्रेस का विभाजन हो गया।

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 118 24-03-2021 11:47:21

बोध प्रश्न-1

1) समाचार-पत्र और पत्रिकाओं ने राष्ट्रीय चेतना के विकास में कैसे मदद की?

.....

.....

.....

2) कांग्रेस की उत्पत्ति का कौन-सा सिद्धांत आपको स्वीकार्य लगता है?

.....

.....

.....

10.7 प्रारंभिक कांग्रेस की कार्य प्रणाली

पहले के कांग्रेस जनों को शांतिपूर्ण एवं संवैधानिक आंदोलन की प्रभावोत्पादकता में पूर्ण विश्वास था। प्रेस तथा वार्षिक अधिवेशन का मंच उनके प्रचार के माध्यम थे। प्रेस के माध्यम से ही पूरे साल कांग्रेस का प्रचार कार्य किया जाता था। अनेक नेता अंग्रेजी या भारतीय भाषाओं के समाचार-पत्रों के संपादक थे और वे अपनी लेखनी का प्रभावपूर्ण प्रयोग करते थे। प्रतिवर्ष अधिवेशन का आयोजन कांग्रेस के प्रचार का दूसरा तरीका था। इन सभाओं में सरकार की नीतियों पर विचार-विमर्श किया जाता था तथा प्रभावशाली ढंग से प्रस्ताव पारित किए जाते थे। इन वार्षिक अधिवेशनों ने मध्यवर्गीय शिक्षित समुदाय तथा सरकार दोनों का ही ध्यान आकर्षित किया। लेकिन सबसे बड़ी कमी यह थी कि यह अधिवेशन साल में एक बार सिर्फ तीन दिन के लिए ही होता था। दो अधिवेशनों के अंतराल में काम करते रहने वाला इसका अपना कोई संगठन नहीं था। कांग्रेसियों का ब्रिटिश राष्ट्र की आधारभूत न्यायप्रियता और अच्छाई में दृढ़ विश्वास था। वे इस विश्वास को लेकर कार्य कर रहे थे कि यदि इंग्लैंड में अंग्रेजों तक भारत की दशा की सही तस्वीर पहुँच जाती है तो सब कुछ ठीक हो जाएगा। वे समझते थे कि नागरिकों और उनके अधिकारों के बीच नौकरशाही आड़े आ रही है। इसलिए उनका उद्देश्य भारतीय जनता को जागृत करना था ताकि वो अपने अधिकारों को समझ सकें। यह (कांग्रेस) ब्रिटिश जनता को भारतीयों की कठिनाइयों की जानकारी भी देना चाहती थी और उसे भारत के प्रति अपने कर्तव्य की याद भी दिलाती थी। अंग्रेजों तक भारत की दुर्दशा की सही तस्वीर पेश करने के इरादे से प्रमुख भारतीय नेताओं के प्रतिनिधि मण्डल विदेश भेजे गए। सन् 1889 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की ब्रिटिश समिति की स्थापना हुई। अपने प्रचार कार्य के लिए इस समिति ने 1890 में अपने मुख-पत्र 'इण्डिया' को शुरू किया। ब्रिटिश सत्ता तक भारतीय दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही दादाभाई नौरोजी ने अपनी जिदंगी का एक बड़ा हिस्सा इंग्लैंड में बिताया। वे ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स (ब्रिटिश संसद के निम्न सदन) के लिए चुने गए और वहाँ उन्होंने भारत के शुभचिंतकों का एक प्रभावशाली दल गठित किया।

10.8 नरम दल (उदारवादी) : माँगें और कार्यक्रम

अपने पहले चरण (1885-1905) में कांग्रेस का कार्यक्रम बहुत सीमित था। उसकी माँगें हल्के फुल्के संवैधानिक सुधारों, आर्थिक सहायता, प्रशासकीय पुनर्संगठन तथा नागरिक अधिकारों की सुरक्षा तक सीमित थी।

उसकी मुख्य माँगें इस प्रकार थीं:

- प्रांतीय काउंसिलों का गठन,
- इंडियन सिविल सर्विस (आई.सी.एस.) की परीक्षा का इंग्लैंड के साथ ही साथ भारत में भी आयोजन,
- न्यायपालिका का कार्यपालिका से पृथक्कीकरण,

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 119 24-03-2021 11:47:22

- आर्म्स एक्ट को रद्द करना,
- सेना में भारतीयों की कमीशन्ड ऑफीसरों (सैकिण्ड लेफ्टिनेन्ट तथा उससे ऊपर के पद) के पद पर नियुक्ति,
- सैनिक व्यय में कमी, तथा
- भारत के सभी भागों में भूमि के स्थायी बंदोबस्त का प्रचलन।

कांग्रेस ने सरकार द्वारा उठाए गए सभी महत्वपूर्ण कदमों और नीतियों पर अपनी राय दी और उसकी गलत नीतियों की आलोचना की तथा उनका विरोध किया। इन माँगों को हर साल दोहराया गया किंतु सरकार ने इन पर शायद ही कभी ध्यान दिया हो। पहले बीस वर्षों (1885-1905) में कांग्रेस के कार्यक्रम में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। उसकी मुख्य माँगें लगभग वही बनी रहीं जो उसके पहले तीन या चार अधिवेशनों में पेश की गई थीं। कांग्रेस का यह काल नरम दल का युग (उदारवादियों का युग) कहलाता है। इस काल में नेतागण अपनी माँगें बड़े संयत रूप से रखते थे। वे सरकार को नाराज नहीं करना चाहते थे और इस बात का भी खतरा मोल नहीं लेना चाहते थे कि सरकार नाराज होकर उनकी गतिविधियों का दमन करे। सन् 1885 से सन् 1892 तक उनकी मुख्य माँगें यही थीं कि, विधान परिषदों का विस्तार व सुधार हो, काउंसिल के सदस्यों में जनता के चुने हुए प्रतिनिधि हों, तथा इन काउंसिलों के अधिकारों में वृद्धि हो।

ब्रिटिश सरकार को सन् 1892 का इण्डियन काउंसिल एक्ट पारित करने के लिए बाध्य होना पड़ा, लेकिन इस एक्ट की धाराओं से वह कांग्रेस के नेताओं को संतुष्ट नहीं कर सकीं। कांग्रेस के नेताओं ने यह माँग की कि भारतीय कोष (सार्वजनिक क्षेत्र के) पर भारतीय नियंत्रण हो, तथा उन्होंने अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम के समय दिए गए नारे, 'बिना प्रतिनिधित्व के कोई कराधान नहीं' को भी दुहराया। सन् 1905 में कांग्रेस ने स्वराज्य या भारतीयों के लिए ब्रिटिश साम्राज्य के अंतर्गत स्वशासन की माँग की। स्वशासन की माँग स्वायत्त शासित आस्ट्रेलिया और कनाडा के नमूने पर की गई थी। स्वशासन की यह माँग पहली बार जी. के. गोखले ने सन् 1905 (बनारस) में रखी थी और बाद में दादाभाई नौरोजी ने सन् 1906 (कलकत्ता) में इसे अधिक स्पष्ट शब्दों में रखा था। उन्होंने प्रेस तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के महत्व को पूरी तरह समझा और इस पर प्रतिबंध लगाने के हर प्रयास की भर्त्सना की। वास्तव में, प्रेस पर लगाए गए प्रतिबंधों को हटाने के लिए किया जाने वाला आंदोलन राष्ट्रवादी स्वतंत्रता आंदोलन का एक अभिन्न अंग बन गया। इन माँगों की प्रगतिशीलता तथा इनका भारतीय मध्यम वर्ग की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से सीधा संबंध, यह स्पष्ट करता है कि प्रारंभिक वर्षों में कांग्रेस, मुख्य रूप से एक मध्यवर्गीय संस्था थी। कांग्रेस के अधिकांश नेताओं ने आर्थिक और राजनैतिक दोनों ही कारणों से व्यापक स्तर पर रेलवे, बागानों तथा उद्योगों में विदेशी पूँजी के लगाए जाने का विरोध किया, साथ ही उन्होंने सरकार द्वारा इन क्षेत्रों में विदेशी पूँजी लगाए जाने के लिए दी गई विशेष सुविधाओं का भी विरोध किया। सेना तथा नागरिक सेवाओं (सिविल सर्विस) पर किए जाने वाले व्यय की आलोचना करके अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने भारत में ब्रिटिश शासन के औचित्य को ही चुनौती दे डाली। भू-राजस्व, तथा कर नीतियों की भर्त्सना करके उन्होंने ब्रिटिश प्रशासन के वित्तीय आधार को दुर्बल करने का प्रयास किया। एशिया तथा अफ्रीका में ब्रिटिश साम्राज्यवादी हितों के लिए भारतीय सेना और भारतीय राजस्व के उपयोग को उन्होंने आर्थिक शोषण का एक और उदाहरण बताया।

10.9 गरम दल (उग्रदल) का सैद्धान्तिक आधार

1904-05 के आसपास जो समूह कांग्रेस में प्रभावशाली हुआ उसे इतिहासकारों ने गरम दल कहा है। गरम दल के अनुसार सन् 1857 के विद्रोह के राष्ट्रवादी उद्देश्य स्वधर्म तथा स्वराज की स्थापना थे। उदारवादियों (नरम दल) ने जो बुद्धिवाद और पाश्चात्य आदर्शों को अपनाया था, उसके कारण वे भारत में जनसाधारण से बहुत दूर चले गए थे। इसीलिए अपने उच्च आदर्शों के बावजूद वे जनसाधारण पर अपना प्रभाव जमाने में असफल रहे। यह

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 120 24-03-2021 11:47:22

जरूरी था कि कोई समूह जनता और राजनैतिक नेतृत्व के बीच की खाई को भरता। सभी पाश्चात्य वस्तुओं की प्रशंसा और उसकी नकल करने की प्रवृत्ति के स्थान पर उन्नीसवीं शताब्दी के नवें दशक में एक ऐसा आंदोलन चला जिसमें लोगों को अपनी प्राचीन सभ्यता की ओर लौटने के लिए कहा गया। राजनैतिक उग्रवादी, जिन्होंने अपनी सांस्कृतिक विरासत से प्रेरणा ग्रहण की थी, परम राष्ट्रवादी थे और यह चाहते थे कि भारत सब देशों से, समान स्तर पर, और आत्मसम्मान के साथ मिले। उनमें आत्मसम्मान कूट-कूट कर भरा था और वे अपना सर ऊँचा रखना चाहते थे। वे नरम दल (उदारवादियों) को अंग्रेजों का चापलूस व मुसाहिब मानते थे इसीलिए उन्होंने उनका विरोध किया। उग्रवादियों की दृष्टि में मुक्ति केवल राजनीति तक सीमित नहीं थी बल्कि इसका अर्थ कहीं अधिक व्यापक और गूढ़ था। उनके लिए इसका अर्थ जीवन के समस्त क्षेत्रों में नवस्फूर्ति व नवशक्ति का संचार करना था।

गरम दल देश के तीन भागों में अधिक सक्रिय था। महाराष्ट्र दल के नेता थे तिलक, बंगाल दल के नेता थे, बिपिनचंद्र पाल और अरविंदों तथा पंजाब दल का नेतृत्व लाला लाजपतराय कर रहे थे। बंगाल का गरम दल बंकिमचंद्र की विचारधारा से बहुत प्रभावित था। बंकिम एडमण्ड बर्क की भाँति उदार पुरातनपंथीं थे। वे भूतकाल से संबंध विच्छेद नहीं करना चाहते थे, क्योंकि उनकी दृष्टि में इससे समस्याएँ सुलझने के बजाए और भी ज्यादा उलझ जातीं। वे सुधारों को ऊपर से थोपने के विरोधी थे। उनका विचार था कि सुधारों से पूर्व नैतिक और धार्मिक पुनरुत्थान आवश्यक है, और यह पुनरुत्थान केवल धर्म के मूल सिद्धांतों के आधार पर ही संभव है। बंकिम ने उदारवादियों की भर्त्सनापूर्ण आलोचना करके गरम दल को इस विषय में दिशा प्रदान की। गरम दल का राष्ट्रवाद भावुकता से परिपूर्ण था। राष्ट्रवाद की इस प्रेरणादायक धारणा में सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक आदर्शों, सभी का समावेश था। अरविंदों ने तो देशभक्ति को ऊँचा उठाकर मातृ वंदना के समकक्ष रख दिया था। एक पत्र में उन्होंने कहा था, ''मैं अपने देश को अपनी माँ मानता हूँ। मैं उसकी आराधना करता हूँ। मैं उसकी स्तुति करता हूँ।''

10.10 गरम दल की कार्रवाई

तिलक ने इस बात का विरोध किया कि एक विदेशी सरकार जनता के निजी और व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप करे। 1891 के विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाने वाले विधेयक को लेकर उनका सुधारकों से झगड़ा हो गया। उन्होंने सन् 1893 में गणपति महोत्सव प्रारंभ किया। सन् 1893-94 में अरविंद ने 'इन्दुप्रकाश' पत्र में 'न्यू लैम्प्स फॉर ओल्ड' का प्रकाशन किया।

तिलक ने सन् 1895 में पूना में कांग्रेस के पण्डाल में 'नेशनल सोशल कांफ्रेन्स' को अपना अधिवेशन नहीं करने दिया और इस प्रकार उसे चुनौती दी। 'नेशनल सोशल कांफ्रेन्स' उदारवादियों के प्रभाव में था। इसी वर्ष (सन् 1895) पूना सार्वजनिक सभा पर भी उदारवादियों के स्थान पर गरम दल का प्रभुत्व हो गया। शिवाजी उत्सव का आयोजन पहली बार 15 अप्रैल, 1896 को हुआ। 4 नवंबर, 1896 को दक्कन सभा की स्थापना से महाराष्ट्र में नरम दल और गरम दल का पूरी तरह अलगाव हो गया, लेकिन पूरे भारत में अभी इन दोनों दलों में मतभेद, अलगाव की स्थिति तक नहीं पहुँचे थे। उदाहरण के लिए, बंगाल के गरम दल के नेता बिपिनचंद्र पाल अब भी उदारवादियों के खेमे में थे। सन् 1897 में उन्होंने लिखा था, ''मैं ब्रिटिश सरकार के प्रति निष्ठावान हूँ, क्योंकि मैं समझता हूँ कि ब्रिटिश सरकार के प्रति निष्ठा और अपने देश के अपने देशवासियों के प्रति निष्ठा एक ही बात है और मैं यह भी मानता हूँ कि भगवान ने हमारी मुक्ति के लिए इस सरकार को हम पर शासन करने के लिए भेजा है।'' सन् 1902 में जाकर ही उनके विचारों में परिवर्तन आया, और उन्होंने लिखा, ''कांग्रेस भारत में, और लंदन में उसकी ब्रिटिश कमेटी, दोनों ही भिक्षा माँगने वाली संस्थाएँ हैं।'' कांग्रेस की नरम और अस्थिर नीतियों के कारण ही लाला लाजपतराय इसके कार्यक्रमों के प्रति आकर्षित नहीं हुए। सन् 1893 से लेकर सन् 1900 तक उन्होंने कांग्रेस के किसी भी अधिवेशन में भाग नहीं लिया। वे इस काल में कांग्रेस के

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 121 24-03-2021 11:47:22

नेताओं के विषय में यही सोचते थे कि उन्हें देश की चिंता से अधिक अपनी ख्याति और शान की परवाह है। जहाँ एक ओर एक के बाद एक भ्राँतियों और उलझनों ने उदारवादियों की स्थिति कमजोर कर दी वहाँ दूसरी ओर रूस पर जापान की विजय (1904-1905) ने पूरे एशिया में नवीन उत्साह का संचार किया। इससे पूर्व सन् 1896 में इथोपिया (अफ्रीकी राष्ट्र) ने इटली की सेना को पराजित किया था। एशियाई और अफ्रीकी राष्ट्रों की इन विजयों ने यूरोप की श्रेष्ठता का जो भ्रम था, उसे तोड़ दिया और उसने भारतीयों में नया आत्मविश्वास जगा दिया था।

10.11 विभाजन (बंगाल), बहिष्कार, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा

बंगाल को विभाजित करने की कर्जन की योजना धीरे-धीरे 1 जून, 1903 में उसके सीमा पुनर्गठन से लेकर 2 फरवरी, 1905 जब विभाजन की योजना लंदन में गृह प्रशासन को भेजी गयी, के बीच साकार हुई। उन्नीस जुलाई 1905 को भारत सरकार ने नए प्रांत ''पूर्वी बंगाल तथा असम''के बनाए जाने की घोषणा कर दी, जिसमें चटगाँव, ढाका तथा राजशाही डिविजन और त्रिपुरा, मालदा तथा असम के इलाके शामिल थे। 16 अक्टूबर, 1905 को बंगाल के तथा उसके 4.15 करोड़ लोगों के विभाजन के बाद यह नया प्रांत अस्तित्व में आ गया।

बंगाल में विभाजन-विरोधी आंदोलन हालांकि पारंपरिक नरमपंथी राष्ट्रीय तरीके से शुरू हुआ फिर भी इसमें तीव्र प्रचार तथा रोषपूर्ण विरोध के अंश थे। समाचार-पत्रों में विभाजन योजना के विरुद्ध अभियान छेड़ा गया, इसके विरोध में बहुत-सी सार्वजनिक सभाएँ की गयीं तथा सरकार को इस कदम को वापिस लेने के लिए ज्ञापन दिए गए। कलकता के टाऊन हॉल में बड़ी सभा आयोजित की गयी जिनमें जिलों से आए हुए प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा अपनी क्षतिग्रस्त भावनाओं को व्यक्त किया। यह सब बहुत ही प्रभावशाली था जिससे विभाजन के विरुद्ध मध्यम वर्ग की स्थिति बहुत ही स्पष्ट हो गयी थी। लेकिन भारत और ब्रिटेन के उदासीन प्रशासन पर इसका कोई असर नहीं पड़ा। इन तरीकों की असफलता के कारण 1905 के मध्य से नए तरीकों की खोज शुरू हुई और इसके फलस्वरूप ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार एक प्रभावशाली हथियार के रूप में सामने आया। बहिष्कार का सुझाव सबसे पहले 3 जुलाई, 1905 को कृष्ण कुमार मित्र के *संजीवनी* अखबार ने दिया जिसे बाद में 7 अगस्त 1905 को टाउन हॉल की एक सभा में प्रमुख लोगों ने मान लिया। इस खोज के बाद रविन्द्रनाथ टैगोर तथा रामेन्द्र सुन्दर त्रिवेदी ने विभाजन के दिन को **रक्षाबन्धन** (भाईचारे के रूप में एक दूसरे की कलाई पर धागा बाँधना) तथा अरान्धन (शोक के कारण घर में चूल्हा न जलाने की प्रथा) के रूप में मनाने का आह्वान किया। इस कार्यवाही से आंदोलन को एक नया उत्साह मिला।

ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार के बाद :

- स्वदेशी का समर्थन किया गया और लोगों से राष्ट्रीय कर्तव्य के रूप में भारत में बनी वस्तुओं को खरीदने का अनुरोध किया गया,
- **चरखा** देश की जनता की आर्थिक आत्मनिर्भरता की इच्छा का प्रतीक बन गया, तथा
- हथकरघा की बनी वस्तुओं आदि को बेचने के लिए आयोजित स्वदेशी मेले एक नियमित विशेषता बन गए।

स्वदेशी या भारतीय उद्यम के लिए एक नया उत्साह पैदा हो गया। बहुत से विशिष्ट भारतीय उद्योग जैसे कि कलकत्ता पौटरीज, बंगाल कैमिकल्ज, बंग लक्ष्मी कॉटन मिल्स, मोहिनी मिल्स तथा नैशनल टैनरी शुरू किए गए। आंदोलन द्वारा सृजित उत्साह के अंतर्गत विभिन्न साबुन, माचिस तथा तम्बाकू बनाने वाले उद्योग और ऑयल मिल्स, वित्तीय, गतिविधियाँ जैसे स्वदेशी बैंक इंश्योरेंस तथा स्टीम नेवीगेशन कंपनियाँ आदि भी शुरू की गई।

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 122 24-03-2021 11:47:22

इस बीच ब्रिटिश वस्तुएँ बेचने वाली दुकानों के सामने धरनों के फलस्वरूप सरकार द्वारा नियंत्रित शैक्षिक संस्थानों का बहिष्कार भी शुरू हो गया। ब्रिटिश सरकार द्वारा धरना दे रहे विद्यार्थियों के संस्थानों के अनुदान, छात्रवृत्तियाँ तथा मान्यता वापिस लेने की धमकियों के कारण तथा विद्यार्थियों को फाइन करने तथा उन्हें निष्कासित करने के फैसलों से बहुत ही बड़ी संख्या में विद्यार्थियों ने 'दासता' के इन स्कूलों और कालेजों को छोड़ देने का फैसला किया। स्कूलों और कालेजों के बहिष्कार से स्वदेशी आंदोलन के नेताओं को बंगाल में समानान्तर शिक्षा व्यवस्था चलाने को बाध्य होना पड़ा। जल्दी ही अपीलें जारी की गयीं, अनुदान एकत्र किए गए तथा विशिष्ट व्यक्ति राष्ट्रीय शिक्षा कार्यक्रम बनाने लगे। इन्हीं प्रयत्नों के फलस्वरूप बंगाल टैक्नीकल इंस्टीट्यूट की स्थापना हुई (जिसे 25 जुलाई, 1906 को शुरू किया गया था और जो बाद में कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग एंड टैक्नोलौजी में परिवर्तित हो गया और जो आज के जादवपुर विश्वविद्यालय का आधार बना), बंगाल नेशनल कालेज तथा स्कूल (जिसे 15 अगस्त 1906 को स्थापित किया गया था और जिसके प्रिंसिपल बने थे, अरविन्दो घोष) तथा जिलों में विभिन्न राष्ट्रीय प्राइमरी स्कूलों एवं सैकेंडरी स्कूलों की भी स्थापना हुई।

10.12 क्रांतिकारी राष्ट्रवाद का उदय

लेकिन किसी भी आंदोलन की सफलता उसमें जनता के व्यापक रूप से भाग लेने पर निर्भर करती है। परंतु स्वदेशी आंदोलन में इसका अभाव रहा। कृषकों तथा मजदूरों से उसे आंशिक सफलता मिलने के कारण और सांप्रदायिक उलझन को न सुलझा पाने के कारण 1907 के मध्य तक भी स्वदेशी आंदोलन अपनी चरम सीमा तक नहीं पहुँच पाया और न ही यह पूर्णतया एक जन-आंदोलन में ही बदल सका। इसके अलावा एक प्रबल साम्राज्यवाद-विरोधी आंदोलन के रूप में इसे अपने शक्तिशाली विरोधी के दमनकारी कदम का शिकार होना पड़ा। प्रशासन ने सार्वजनिक स्थानों पर 'बंदे मातरम्' नारे लगाने पर रोक लगा दी, आंदोलन में किसी प्रकार से भी भाग लेने वाले सरकारी नौकरी के लिए अयोग्य करार दे दिए जाते थे तथा विद्यार्थियों को भाग लेने पर जुर्माना देना पड़ता था या उन्हें निकाल दिया जाता था। बरीसाल में गोरखों के दलों को आंदोलनकारियों को सबक सिखाने के लिए भेजा गया तथा पुलिस और अधिकारियों को खुली छूट दे दी गई। चरम सीमा तो अप्रैल 1906 में पहुँची जब बरीसाल में प्रांतीय सभा में भाग ले रहे प्रतिनिधियों पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया। इसके बाद दमनकारी कदम उठाए गए। बल का सामना बल द्वारा करने का सवाल स्वाभाविक रूप से उभर कर सामने आया।

हिंसात्मक तरीका बंगाल के मध्यम वर्गीय युवाओं के रूमानी मानसिकता को भी खूब पसन्द आया जो जन-आंदोलन के सफल न होने पर वैयक्तिक शौर्य के कार्यों में सांत्वना ढूँढते रहे और जब खुली राजनीति सरकार को प्रभावित नहीं कर सकी तो उन्होंने अपनी उम्मीदें गुप्त सभाओं पर टिका दी। हिंसा का रास्ता उनको भी पसन्द आया जिन्हें बहुत जल्दी थी और जिनकी सहनशक्ति समाप्त हो चुकी थी। **युगान्तर** ने अगस्त 1907 में लिखा 'यदि हम बेकार बैठे रहें और विरोध में खड़े होने से इंकार कर दें जब तक कि सारी जनता में निराशा न भर जाए तो हम अनंत तक हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे .....।' उन्नत विशिष्ट वर्ग के सामने दमनकारियों के विरुद्ध हथियार उठाने का ही विकल्प रह गया था, जिससे वह घृणित ब्रिटिश अधिकारियों और उनके गुर्गों के दिलों में आतंक भर सकें और जन-साधारण के सामने मौत से जूझने वाला आदर्श स्थापित कर सकें। जल्दी ही कुछ समितियाँ, विशिष्ट सीमित समितियों में बदल गयीं, जो चुनींदा हत्याओं के बारे में योजनाएँ रचने लगीं तथा हथियार खरीदने के लिए धन जुटाने के लिए राजनैतिक डकैतियाँ डलने लगीं। इन क्रांतिकारी गतिविधियों की अगुवाई कलकत्ता के युगान्तर ग्रुप और ढाका की अनुशीलन समिति ने की।

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 123 24-03-2021 11:47:22

बोध प्रश्न-2

1) नरमदल और गरमदल में कार्य पद्धति की भिन्नताओं की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

2) बंगाल विभाजन और स्वदेशी आंदोलन की राष्ट्रीय योजना उभारने में भूमिका की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

10.13 सारांश

इस इकाई में आपने अध्ययन किया है कि ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में कैसे धीरे-धीरे राष्ट्रीय चेतना विकसित हुई। यह चेतना मुख्य रूप से भारत में ब्रिटिश नीतियों के परिणामस्वरूप विकसित हुई और मध्यम वर्ग तक ही सीमित थी। 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना ने एक नए युग के आगमन को चिह्नित किया। यह भारतीय लोगों में एकता की बढ़ती भावना का एक गोचर प्रतीक था। यह सच है कि शुरुआत में कांग्रेस एक सुंसगठित राजनीतिक संगठन नहीं था। इसकी कोई नियमित सदस्यता या केंद्रीय कार्यालय नहीं था। इसके विचार बहुत नरम और उदारवादी थे। लेकिन जैसा किसी ने सही कहा है कि महान संस्थाओं की शुरुआत अक्सर छोटी होती है। स्वदेशी आंदोलन ने रियायत प्राप्त करने के लिए राज को ''याचिका देने और प्रार्थना करने'' के पहले के राष्ट्रवादी दृष्टिकोण के साथ-साथ नरम दल के राजनीतिक कार्यक्रम को नकारने को चिह्नित किया। इसने भारतीय लोगों के लिए स्वराज या स्वतंत्रता के लक्ष्य को सामने रखा और उन्हें ब्रिटेन के साम्राज्यवादी भारत के खिलाफ संघर्ष करने के लिए प्रतिबद्ध किया। क्रांतिकारी राष्ट्रवाद के विकास ने निश्चित रूप से भारत में अंग्रेजों को परेशान किया लेकिन यह उनकी सत्ता को चुनौती नहीं दे सकता था, जैसा कि स्वदेशी की खुली राजनीति ने किया था और न ही यह उनके शासन के लिए कोई गंभीर खतरा पैदा कर सकता था जैसा बड़े व्यापक पैमाने पर जन-लामबंदी कर सकती थी।

10.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 10.3 देखें।

2) भाग 10.6 देखें।

बोध प्रश्न-2

1) भाग 10.8 और 10.10 देखें।

2) भाग 10.11 देखें।

BHIC-134 (HINDI)_NEW SETTING.indd 124 24-03-2021 11:47:22